

प्रेत का बयान - नागार्जुन

1. प्रस्तावना

'प्रेत का बयान' कविता आज़ादी के बाद के भारतीय समाज के कड़वे यथार्थ को उजागर करती है। कवि फैंटेसी (कल्पना शिल्प) का सहारा लेकर यमराज और एक मरे हुए व्यक्ति (प्रेत) के बीच संवाद के माध्यम से तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था पर करारा प्रहार किया है। यह दिखाती है कि देश भले ही भले ही स्वाधीन हो गया, लेकिन आम जनता के हिस्से में केवल भुखमरी, गरीबी और उपेक्षा ही आई।

2. कविता की कथावस्तु और मुख्य प्रसंग (यमराज-प्रेत संवाद)

कविता की शुरुआत यमलोक से होती है, जहाँ नरक के राजा, यमराज एक नए आए प्रेत से कड़कती आवाज में पूछताछ करते हैं।

- यमराज का प्रश्न: यमराज प्रेत से पूछते हैं कि उसकी मृत्यु कैसे हुई - क्या वह किसी अकाल, भूख, महामारी (जैसे प्लेग, कालाजार, पेचिस) या किसी बीमारी के कारण मरा है ?

- प्रेत का परिचय: प्रेत काँपते हुए, हड्डियों के ढाँचे के रूप में खड़ा होकर जवाब देता है। वह बताता कि वह बिहार के पूर्णिया जिले के धमदाहा थाने के रूपौली गाँव का रहने वाला एक प्राइमरी स्कूल का मास्टर था, जिसकी उम्र 55 वर्ष से अधिक थी।

पृष्ठ 2 / 4

- भूख को नकारना (झूठा आत्मसम्मान):

- यमराज के बार-बार पूछने पर भी शिक्षक का प्रेत यह मानने से साफ इनकार कर देता है कि वह कहता है कि "महाराज, भूख का नाम मत लीजिए, मैं तो पैचिस (आँत खराब होने) के कारण मरा हूँ।" जबकि हकीकत यह थी कि महीनों से वेतन न मिलने के कारण वह दाने-दाने को तरस रहा था और भूख ने ही उसकी जान ली थी।
रेखा के वैचारिक बिंदु (मुख्य संदेश)

3. कविता के प्रमुख वैचारिक बिंदु (मुख्य संदेश)

- स्वाधीनता पर तीखा व्यंग्य: प्रेत खुद को गर्व से "स्वाधीन भारत का नागरिक" कहते दिखाना चाहते हैं कि ऐसी आज़ादी का क्या मौल, जहाँ एक राष्ट्र-निर्माता (शिक्षक) बुनियादी जरूरतों के अभाव में दम तोड़ देता है।
- मध्यमवर्ग का झूठा आत्मसम्मान: शिक्षक का प्रेत मरकर भी अपनी गरीबी और भुखमरी को स्वीकार नहीं करता। यह भारतीय मध्यमवर्गीय समाज की उस मानसिकता को दर्शाता है जो समाज में अपनी इज्जत और मान-मर्यादा की आड़ में अपने दुखों और अभावों को छिपाए रखता है। वह भूख से मरना अपमानजनक समझता है, इसलिए बीमारी का बहाना बनाता है।

- शोषक और शोषित वर्ग का प्रतीक : कविता में यमराज उस बेरहम और संवेदनहीन सरकारी सत्ता-प्रशासन के प्रतीक हैं, जो फाइलों और आंकड़ों में उलझी रहती है और जमीनी हकीकत से कौसों दूर है।
वहीं, प्रेत देश के शोषित, गरीब, और उपेक्षित मेहनतकश वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है।

4. प्रतीकात्मकता (Symbols Used)

नागार्जुन ने कविता में गहरे प्रतीकों का प्रयोग किया है :

- प्राइमरी स्कूल मास्टर : देश की रीढ़, जो नई पीढ़ी का निर्माण करता है, लेकिन स्वयं व्यवस्था द्वारा सबसे अधिक उपेक्षित है।
- वेतन न मिलना : आर्थिक कुप्रबंधन और नौकरशाही के भ्रष्टाचार का प्रतीक है।
- हड्डियों का ढाँचा : भयानक गरीबी और शारीरिक शोषण की पराकाष्ठा को दिखाता है।

5. शिल्प सौंदर्य (भाषा और शैली)

- शैली : यह एक संवादात्मक और फैंटेसी शैली में लिखी गई कविता है, जो पाठक को गहराई से बांधती है।
- भाषा : नागार्जुन ने बोलचाल की सरल, तीखी और व्यंग्यात्मक हिंदी का प्रयोग किया है।
'खड़-खड़-खड़-खड़', 'हड़-हड़-हड़-हड़' जैसे ध्वन्यात्मक शब्दों से प्रेत की जर्जर स्थिति का सजीव चित्रण किया गया है।

हिमालय

मेरे नगपति! मेरे विशाल!

पौरुष, राष्ट्रीयता, मानवतावाद, प्रगतिवाद और यथार्थवाद के युग-चरण कवि 'दिनकर' अपनी

पीढ़ी के कवियों में अपनी विशिष्ट मौलिकता के कारण अग्रगण्य रहे हैं।

यह रचना कवि की बड़ी प्रसिद्ध कृति है। यह भी 'रेणुका' संग्रह से संकलित रचना है जो १९३३ ई० में लिखी गई थी। प्रारम्भ में कवि हिमालय की महिमा का गान करता है। आगे वह उसे ज्वालाओं से दग्ध विकल स्वदेश की ओर आकर्षित करके उसके उस पूर्व रक्षक-रूप का स्मरण कराता है, जब वह भारत पर आक्रमण करने आने वाले विदेशियों को रोक देता है। आज वही स्वदेश, वही पुण्यभूमि संकट में पड़ी है। वह पुराण इतिहास के पृष्ठों का स्मरण कराता है। आज दुपदसुता के बाल खुल रहे हैं, चित्तौड़ पराधीन है, पर वहाँ जौहर की ज्वाला नहीं जलती; राजस्थान गुलाम है पर राणा प्रताप का कहीं पता नहीं; अवध के राम और वृन्दावन के कृष्ण, मगध के अशोक, चन्द्रगुप्त आज क्यों नहीं जन्म लेते?

आज मिथिला की शान धूल-धूसरित है। बुद्ध की कपिलवस्तु बुद्ध के मंगल उपदेशों से शून्य है। वैशाली में प्राचीन लिच्छिवी वंश का गौरवपूर्ण इतिहास आज नहीं है। गण्डकी नदी उदास है, क्योंकि आज कोई विद्यापति का गान उसके तट पर नहीं गूँजता अर्थात् आज न भारत की संस्कृति, न इतिहास और न उसका साहित्य ही अपने स्वाभाविक उत्कर्ष को प्राप्त कर पा रहा है।

कवि आगे नगाधिराज हिमालय से कहता है कि आज पूरब के इस प्रांगण में आने वाले स्वर्ण-युग की आग सुलग रही है। इसमें तू सिंह गर्जना कर और वीर पुरुषों को जागृत कर। आज युधिष्ठिर से शान्तिवादियों को नहीं, अर्जुन से धनुर्धर और भीम से वीरों को हमें दे। आज शंकर के प्रलय-नृत्य और हर हर बम की आवश्यकता है, जिससे देश का अँधेरा फट जाय और आलस्य दूर हो सके। नये युग की शंख-ध्वनि हो रही है, इसमें भारतवासी जगकर सिंहनाद करें, तभी स्वर्णिम प्रभात आयेगा।

इस रचना में एक श्रेष्ठ काव्य के रूप में स्वातन्त्र्य चेतना का आह्वान किया गया है।

नारी

'नारी' शीर्षक कविता 'रसवन्ती' से उद्धृत है। 'दिनकर' जी को जनता का प्यार राष्ट्रीय कविताओं के कारण मिला, सम्मान उन्हें कुरुक्षेत्र नामक महाकाव्य से प्राप्त हुआ और श्रद्धा के भाजन वे 'संस्कृति के चार अध्याय' नामक गद्य-ग्रन्थ लिखकर हुए। उनके सुयश के प्रसार में उनके 'रश्मिरथी' नामक खण्डकाव्य का बड़ा हाथ है जो शहरों से अधिक ग्रामों में कहीं अधिक उत्साह के साथ पढ़ा जा रहा है।

एक जगह 'दिनकर' जी ने स्वयं लिखा है—सुयश तो मुझे 'हुँकार' से मिला, लेकिन आत्मा मेरी 'रसवन्ती' में बसती है। 'रसवन्ती' 'दिनकर' जी के शृंगार-काव्य अथवा रस-गीतों का संग्रह है जो 'हुँकार' के तुरन्त बाद १९४० में निकली थी। उस धारा का पूरा विकास उनके नवीन काव्य 'उर्वशी' में हुआ है। इसकी पूरी संभावना है कि 'उर्वशी' 'दिनकर' की अब तक की काव्य-कृतियों में सर्वोत्तम और सर्वश्रेष्ठ समझी गई। हिन्दी में प्रौढ़ शृंगार की यह एक बेजोड़ कविता है।

जहाँ 'दिनकर' की आत्मा बसती है 'नारी' नामक कविता उसी 'रसवन्ती' से उद्धृत है। इस कविता में नारी की दुर्दशा, नारी के उत्पीड़न, नारी के स्वातन्त्र्य विषय पर कुछ भी नहीं लिखा गया है। इस कविता में मात्र शृंगारिक चेष्टाओं, हाव, भावों तथा उसके सौन्दर्य का निरूपण शृंगार रस की दृष्टि से किया गया है। हे देवि! तुम्हारी एक मधुर मुस्कान पर बड़े-बड़े तपस्वी, वेदों, दार्शनिक, डाकू तथा साधारण मानव अपने दृढ़ विचारों, संकल्पों को नितान्जलि देकर तुम्हारे लिए समर्पित हो जाते हैं। तुम्हारे सौन्दर्य का आकर्षण अप्रतिम है। प्रसाद ने ठीक ही कहा है—

उज्ज्वल वरदान चेतना का

सौन्दर्य जिसे सब कहते हैं,

जिसमें अनेक अधिलाषाओं के

सपने सब जगते रहते हैं।

नारी की मात्र दृष्टि के लिये कवि कहता है—

दृष्टि तुमने फेरी जिस ओर

गई खिल कमल-पंक्ति अम्लान,

हिंस्र मानव के कर से खस्त

शिथिल गिर गये धनुष औ' बाण!

और भी—

हो गया मंदिर दृगों को देख

सिंह-विजयी बर्बर लाचार,

रूप के एक तन्तु में नारि,

गया बँध मत गयन्द-कुमार।

इतना ही नहीं—

एक इंगित पर दौड़े शूर

कनक-मृग पर होकर हटा जान,

हुई ऋषियों के तप का मोल

तुम्हारी एक मधुर मुस्कान।

कवि कहता है कि हे नारी! तुम्हारी इस मोहिनी शक्ति का पता किसी को नहीं चला है—

पुरुष पँखुड़ी को रहा निहार

अयुत जन्मों से छवि पर भूल,

आज तक जान न पाया नारि!

मोहिनी इस माया का मूल।

अन्ततोगत्वा कवि नारी को संबोधित करता है कि तुम मेरे स्वप्नों में समाहित हो और परिणामस्वरूप मुझ भिक्षुक के गान तुम्हारे पीछे-पीछे ध्वनित हो रहे हैं। इस कविता में आद्योपान्त शृंगार रस का ही परिपाक पाया जाता है।